उत्तराखंड उच्च न्यायालय, नैनीताल
द्वितीय अपील संख्या 98/2021

समक्ष माननीय न्यायमूर्ति श्री शरद कुमार शर्मा

महेशलता व अन्य......................वादी/अपीलार्थी
बनाम
सुखबीरी.....................................प्रतिवादी/प्रत्यर्थी

अपीलार्थियों की ओर से .........श्री तपन सिंह, अधिवक्ता।
प्रत्यर्थी की ओर से .................श्री अरविंद वशिष्ठ, वरिष्ठ अधिवक्ता , श्री मुनीश भारद्वाज अधिवक्ता

माननीय शरद कुमार शर्मा,जे,

30.05.1994 को, वादी/अपीलकर्ताओं ने संपत्तियों के संबंध में वाद सं0 203/1994 , "महेशलता और अन्य बनाम सुखबीरी" के रूप में एक वाद दायर किया था, जिसका विवरण वाद पत्र के अंत में वर्णित है अर्थात खसरा संख्या 235/2, 235/3 में पड़ी भूमि, जिसका क्षेत्रफल 3 बिस्वा, 6 बिस्वाँसी भूमि, ग्राम जगजीतपुर, परगना ज्वालापुर, तहसील एवं जिला हरिद्वार के आबादी क्षेत्र में स्थित है। प्रश्नगत संपत्ति की सीमा उसमें उत्तर में एक मार्ग के रूप में वर्णित थी और उसके बाद, मंदिर की भूमि, दक्षिण में हरिजन बस्ती, पूर्व में एक मार्ग और पश्चिम में मदन की संपत्ति थी।

2. वादी/अपीलकर्ता द्वारा इस प्रकार स्थापित किए गए वाद में संपत्ति का वर्णन उस वादी मानचित्र में अधिक उचित रूप से किया गया था जो उसमें संलग्न था और जो कागज संख्या 4ए/6 के माध्यम से रिकॉर्ड का हिस्सा बनाया गया था , और उस डिक्री की प्रकृति जो वादी द्वारा प्रश्नगत वाद में मांगी गई थी, निम्नानुसार थी:—

"यह कि वादीगण अदालत से निम्नलिखित मांग करते हैं:

(अ) डिग्री इस्तकसरिया बहक यादीगण बरखिलाफ प्रतिवादीगण इस अमर की सादिर फरमायी जावे कि वादीगण आराजी निम्नलिखित ए०बी०सी०डी० के तन्हास्वामी व मालिक हैं।
(अ) बजरिये डिग्री स्थायी निषेधाज्ञा के द्वारा प्रतिवादी को निषेध किया जावे कि वह वादीगण के कब्जे आराजी निम्नलिखित में कोई दखल अन्दाजी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से ना करें ना करावे ।
(स) खर्चा मुकदमा वादीगण को प्रतिवादीगण से दिलाया जावे।
(इ) अन्य दिगर दादरसी जो राय अदालत में उचित हो वह भी सादिर फरमायी जावे"

3. वास्तव में, यदि डिक्री की प्रकृति, जिसे वाद में प्रदान करने की मांग की गई थी, को इस तथ्य के अलावा ध्यान में रखा जाता है कि वह प्रतिवादी/प्रत्यर्थी के विवादित संपत्ति पर गलत हस्तक्षेप के कथित कृत्य के खिलाफ स्थायी निषेधाज्ञा प्रदान करने के लिए एक डिक्री की मांग कर रहा था। वादी ने चित्र ए, बी, सी, डी द्वारा वर्णित संपत्ति के संबंध में अपने शीर्षक और स्वामित्व की घ ोषणा की एक डिक्री भी मांगी है, जैसा कि वाद मानचित्र में वर्णित है । जिसका अर्थ है, प्रश्नगत वाद

में, वादपत्र के पाद में वर्णित विवादित संपत्ति के शीर्षक के रूप मे ंघोषणा का एक तत्व था, जब संशोधित अनुतोष के लिए घोषणा की मांग की थी।

4. प्रतिवादी/प्रत्यर्थी को नोटिस जारी किया गया और उन्होंने 21.11.1996 को लिखित कथन प्रस्तुत किया, और एक प्रतिदावे के माध्यम से, प्रतिवादी ने खसरा संख्या 235/1 में पड़ी संपत्ति के हिस्से पर कब्जा देने की डिक्री मांगी थी। आदेश VIII नियम 6ए को लागू करने के लिए काउंटर क्लेम के माध्यम से मांगी गई राहत का प्रासंगिक हिस्सा यहां निकाला गया है:–

> अत: पतिवादिनी प्रार्थना करती है कि:,
> अ– यह कि प्रश्नगत सम्पत्ति जिसका विवरण वादपत्र के अन्त में दिया गया है खसरा नम्बर 235 / 1 का कब्जा वादनी से प्रतिवादनी को दिलाया जाये।
> ब– यह कि अन्य दादरसी जो राय अदालत में उचित हो प्रतिवादनी को वादनी से दिलायी जावे ।
> स– यह कि खर्चा काउन्टर क्लेम प्रतिवादनी को वादनी से दिलाया जाये।

5. वाद अग्रसारित किया गया , और अभिवचनों के आदान–प्रदान के बाद, विद्वान विचारण न्यायालय ने 04.12.1996 को निम्नलिखित वाद–विन्दु तैयार किये और 06.07.2021 को निम्नलिखित प्रभाव के लिए एक अतिरिक्त वाद–विन्दु बनाया गया: –

> “1. क्या विवादित सम्पत्ति पर वादीगण को मिलकियती अधिकार हासिल है ?
> 2. क्या वाद एसटोपल एण्ड लॉ ऑफ एक्कीजेशन रेसजुडिकेटा के सिद्धांत से बाधित है
> 3. क्या वाद का मूल्यांकन कम किया गया है ?
> 4. क्या विवादित भूमि खसरा संख्या २३५/१ या २३५/२ व २३५/३ में स्थित है ?
> 5. क्या प्रतिवादनी वादनी से खसरा नं० २३५/१ पर कब्जा प्राप्त करने की अधिकारिणी है ?
> 6. क्या काउन्टर क्लेम का मूल्यांकन कम किया है तथा प्रदत्त न्यायशुल्क अपर्याप्त है?
> 7. अनुतोष, यदि कोई हो, जिसे वादनी व प्रतिवादनी प्राप्त करनेकी अधिकारिणी हे?"

6. उभय पक्षकारों द्वारा अपने अपने मौखिक और दस्तावेजी दोनों साक्ष्य प्रस्तुत किये, और विशेष रूप से वादी/अपीलकर्ता ने अपने तर्क के समर्थन में, विवादित भूमि से संबन्धित खसरा की प्रति जो कब्जे का एक दस्तावेज होता है, और आवेदन की एक प्रति, जो वादी/अपीलकर्ता द्वारा दायर की गई थी रिकॉड पर रखी । जबकि, प्रतिवादी ने अपने तर्क के समर्थन में सूची संख्या 21C1 के माध्यम से दस्तावेज दायर किए थे, जिसमें केस नंबर 427/1925, तीरथ सिंह बनाम गणेशी लाल और अन्य में सहारनपुर की मुंसिफ अदालत द्वारा दिया गया निर्णय शामिल था, जैसा कि 19.11.1925 को तय किया गया था, साथ ही साथ प्रतिवादी ने विवाद के समर्थन में, पेपर सं0 66Ga1 के माध्यम से मुंसिफ कोर्ट, सहारनपुर के समक्ष योजित मुकदमे की प्रति और 27.09.1925 को उस पर दिया गया निर्णय भी रिकॉर्ड पर रखा था ।

7. वादी अपीलकर्ता, अपने विवाद के समर्थन में , निचली अदालत के समक्ष गवाह के रूप में उपस्थित हुए और अपने तर्क के समर्थन में बयान PW1 जयभगवान और PW2 राजेश कुमार को पेश किया गया था, , प्रतिवादी ने अपने तर्क के समर्थन में , डीडब्ल्यू1 सुखबीरी को गवाह पेश किया था, और डीडब्ल्यू2 श्री राम शाह की मौखिक गवाही भी पेश की थी, जिसे उसके द्वारा अपने लिखित कथन एवं अपने प्रतिदावे में उठाया गया था।

8. वास्तव में, इस स्तर पर ही, न्यायालय यह मानना उचित समझता है कि वादी/अपीलकर्ता, विवादित संपत्ति के संबंध में खसरा की प्रति रिकॉर्ड पर रखने के अलावा प्रश्नगत संपत्ति के संबंध में शीर्षक या कब्जे के किसी अन्य प्रमाणित सार्वजनिक दस्तावेज को प्रस्तुत नहीं

किया है; क्योंकि खसरा केवल एक दस्तावेज के रूप में ही सीमित होगा, जिसे केवल संपत्ति पर कब्जे के उद्देश्यों के लिए पढ़ा जा सकता है, न कि शीर्षक स्थापित करने के उद्देश्यों के लिए। विद्वान ट्रायल कोर्ट द्वारा 04.12.1996 और 06.07.2001 को तैयार किए गए मुद्दे के आधार पर, वर्तमान द्वितीय अपील के लिए विचार करने के लिए प्रासंगिक मुद्दा, वाद में उठाया गया अनुतोष होगा, अर्थात वाद विन्दु संख्या 1; कि क्या वादी/अपीलकर्ता का संपत्ति पर स्वामित्व और अधिकार था और वास्तविक कब्जे में था। विद्वान विचारण न्यायालय ने वाद विन्द संख्या 1 का निर्णय करने के लिए कार्यवाही की और एक निष्कर्ष दर्ज किया था। कि वादी/अपीलार्थी खसरा नंबर पर अपना कब्जा स्थापित करने में सफल रहे हैं, विशेष रूप से पेपर नंबर 1 द्वारा दर्शाई गई संपत्ति पर, लेकिन विवादित संपत्ति के संबंध में पूरी तरह से कब्जे के संबंध में कोई निर्णायक सबूत नहीं दिया गया था . तदनुसार, वाद विन्दु संख्या 1 का निर्णय करते समय जिस पर वादी/अपीलार्थी के विद्वान वकील ने अत्यधिक भरोसा किया था, अवलोकन किया गया, जो कि निम्नलिखित निष्कर्ष के रूप मेंदर्ज किया गया था: –

> "जिससे यह स्पष्ट होता है कि विपक्षी को नही पता है कि स्वयं की सम्पत्ति किस जगह है। ऐसे में वादनी की सम्पत्ति किस जगह है, उसका भी उसे पता होना संशय उत्पन्न करता है। वादनी ने स्वयं की सम्पत्ति पर उस पर कब्जा होना साबित किया है जिसे विपक्षी ने भी माना है। परन्तु उसे अपना होना विपक्षी साबित नहीं कर पाया है । विपक्षी को चाहिए था कि इसके लिए साक्ष्य पत्रावली में दाखिल करें। परन्तु विपक्षी द्वारा कोई विश्वसनीय साक्ष्य कि विवादित स्थल किस खसरा नम्बर में है। इसके लिए न तो विपक्षी द्वारा कोई माईश मय आख्या ही मंगाई गई है। मौके पर वादीगण का न होना तथा खसरा नम्बर स्वयं का होना बाद बिन्दु संख्या १ को वादीगण के पक्ष में होना साबित करता है । अत: मेरे निष्कर्ष में वाद बिन्दु संख्या १ वादी के पक्ष तथा प्रतिवादनी के विरूद्ध निस्तारित किया जाता है। "

9. वास्तव में, यदि पूर्वोक्त निष्कर्ष को ध्यान में रखा जाता है और इसे वादी/अपीलकर्ता द्वारा मांगी गई डिक्री की प्रकृति के संबंध में पढ़ा जाता है, जिसमें उसने संबंधित संपत्ति पर अपने स्वामित्व की घोषणा के साथ साथ ही कब्जे और स्थायी निषेधाज्ञा के डिक्री के अनुदान के रूप मे मांग की है। इन तीन राहतों को इसके विचार में विभाजित किया जाना है (i) घ ोषणा के संबंध में दर्ज किये गये निष्कर्ष के रूप में (ii) कब्जे से संबन्घित निष्कर्ष के रूप में (iii) कब्जे पर आधारित स्थायी निषेधाज्ञा की डिक्री प्रदान करने के संबंध में। एक सिविल कार्यवाही में विचार के ये तीन पहलू एक दूसरे से पूरी तरह से अलग हैं और जिसमें विभिन्न कारकों पर विचार करना शामिल है, विशेष रूप से जब यह शीर्षक की घोषणा पर जोर देता है जिसमें विवादित संपत्ति पर शीर्षक का तत्व होता है।

10. लेकिन यदि प्रतिवादी द्वारा प्रतिदावे में मांगी गई राहत पर विचार किया जाता है, तो यह केवल खसरा संख्या 235/1 के संबंध में स्थायी निषेधाज्ञा के डिक्री के अनुदान तक ही सीमित थी, जो वास्तव में वाद से संबन्धित एक विषय भी नहीं था। क्योंकि यदि वाद में संपत्तियों के दो विवरण और प्रतिदावों में उस पर विचार किया जाता है, तो वे अपने विवरण के अनुसार स्वीकार्य रूप से एक दूसरे से बिल्कुल स्वतंत्र हैं और यह कोई मामला या निष्कर्ष भी नहीं है जिसे नीचे के न्यायालय द्वारा रिकॉर्ड किया गया है, भले ही यह मान लिया जाए कि प्रतिवादी द्वारा उठाया गया प्रतिवाद खसरा संख्या 235/1 के बराबर था, वादी/प्रतिवादी ने प्रतिदावे के लिए कोई स्वतंत्र अपील नहीं की है। किसी प्रतिदावे की अस्वीकृति की गैर–चुनौती का, इस कारण से अपील दाखिल करके वाद में दी गई डिक्री को दी गई चुनौती पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, क्योंकि दोनों कार्यवाहियों की विषय–वस्तु यह हो सकती है कि प्रतिदावा आदेश VIII नियम 6 ए (4) के तहत एक स्वतंत्र मुकदमे के रूप में माना जाता है, लेकिन उस स्वतंत्र मुकदमे को खसरा संख्या 235/1 के संबंध में पढ़ने के लिए सीमित किया जाना चाहिए, जो कि वाद में विवादित संपत्ति नहीं है , इस प्रकार रेस जुडिकाटा की

**अवधारणा वर्तमान मामले से अलग होगी, जब विषय वस्तु यानी संपत्ति मुकदमे में और काउंटर दावे में पूरी तरह से अलग हैं, और कार्यवाही के दृष्टिगत वाद कारण भी अलग है ।**

**11. चूंकि वादी ने संपत्ति पर घोषणा की डिक्री मांगी है, जिसे में वाद में खसरा संख्या 235/2 और 235/3 के रूप में स्वीकार किया गया था, जिसमें 3 बिस्वा, 6 बिसवानी भूमि का क्षेत्र है, ग्राम जगजीतपुर परगना ज्वालापुर, जिला हरिद्वार, दो वाद अर्थात नियमित वाद और प्रतिदावा; जो एक दूसरे के लिए स्वतंत्र थे और काउंटर दावे की अस्वीकृति की गैर चुनौती जो कि एक सामान्य निर्णय और ट्रायल कोर्ट द्वारा दी गई डिक्री द्वारा तय की गई थी, प्रतिवादी / प्रत्यर्थी को प्रतिवादी संपत्ति के एक अलग सेट के लिए, जो वाद की विषय वस्तु थी को चुनौती देने से रोकने के लिए वंचित नहीं करेगी।, इसलिए, एक बार विषय वस्तु के अलग होने के बाद रेस जुडिकाटा के सिद्धांत इस कारण से लागू नहीं होंगे, कि यदि सीपीसी की धारा 11 की सरल भाषा को विचार में लिया जाता है,जो यहाँ निकाला गया है:–**

"कोई न्यायालय किसी ऐसे वाद अथवा वाद.बिन्दु का विचारण नहीं करेगा जिसके वाद.पद में वह विषय, उन्हीं पक्षकारों के मध्य अथवा उन पक्षकारों के मध्य जिनके अधीन वे अथवा उनमें से कोई उसी हक के अन्तर्गत मुकदमेबाजी करने का दावा करता है, एक ऐसे न्यायालय में जो कि ऐसे परवर्ती वाद अथवा ऐसे वाद जिसमें ऐसा वाद.बिन्दु बाद में उठाया गया है, के विचारण में सक्षम है, किसी पूर्ववर्ती वाद में प्रत्यक्ष एवं सारवान् रूप से रहा हो और सुना जा चुका है तथा अन्तिम रूप से ऐसे न्यायालय द्वारा निर्णीत हो चुका है।"

स्पष्टीकरण 1-" पूर्ववर्ती वाद" पद ऐसे वाद का द्योतक है जो प्रश्नगत वाद के पूर्व ही विनिश्चित किया जा चुका है चाहे वह उससे वाद संस्थित किया गया हो या नहीं।

स्पष्टीकरण 2. -इस धारा के प्रयोजनों के लिये न्यायालय की सक्षमता का अवधारण ऐसे न्यायालय के विनिश्चय से अपील करने के अधिकार विषयक किन्हीं उपबन्धों का विचार किये बिना किया जायेगा।

स्पष्टीकरण 3-ऊपर निर्देशित विषय का पूर्ववर्ती वाद में एक पक्षकार द्वारा अभिकथन और दूसरे अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से प्राख्यात या स्वीकृति आवश्यक है।

स्पष्टीकरण 4- ऐसे किसी भी विषय के बारे में, जो ऐसे पूर्ववर्ती वाद में प्रतिरक्षा या आक्रमण का प्रधार बनाया जा सकता था और बनाया जाना चाहिये था, यह समझा जायेगा कि यह ऐसे वाद में प्रत्यक्षतः सारतः विवाद्य रहा है।

स्पष्टीकरण 5- वाद पत्र में दावा किया गया कोई अनुतोष, जो डिक्री द्वारा अभिव्यक्त रूप से नहीं गया है, इस धारा के प्रयोजनों के लिये नामंजूर कर लिया गया समझा जायेगा।

स्पष्टीकरण 6- जहां कोई व्यक्ति किसी लोक अधिकार के या किसी ऐसे प्राइवेट अधिकार के लिये भावनापूर्ण मुकदमा करते हैं जिसका वे अपने लिये और अन्य व्यक्तियों के लिये सामान्यतः दावा करते हैं वहां ऐसे अधिकार से हितबद्ध सभी व्यक्तियों के बारे में इस धारा के प्रयोजनों के लिये यह समझा जायेगा कि वे ऐसे मुकदमा करने वाले व्यक्तियों से व्युत्पन्न अधिकार के अधीन दावा करते हैं।

स्पष्टीकरण 7- इस धारा के उपबन्ध किसी डिक्री के निष्पादन के लिये कार्यवाही को लागू होंगे और इस धारा में किसी वाद विवाद्यक या पूर्ववर्ती वाद के प्रति निर्देशों का अर्थ क्रमशः उस डिक्री के निष्पादन के लिये कार्यवाही, ऐसी कार्यवाही में उठने वाले प्रश्न और उस डिक्री के निष्पादन के लिये पूर्ववर्ती कार्यवाही के प्रति निर्देशों के रूप में लगाया जायेगा।

स्पष्टीकरण 8- कोई विवाद्यक जो सीमित अधिकारिता वाले किसी न्यायालय द्वारा, जो ऐसा विवाद्यक विनिश्चित करने के लिये सक्षम है, सुना गया है और अन्तिम रूप से विनिश्चित किया जा चुका है, किसी पश्चात्वर्ती बाद में पूर्व न्याय के रूप में इस बात के होते हुये भी प्रवृत्त होगा कि सीमित अधिकारिता वाला ऐसा न्यायालय ऐसे पश्चात्वतों बाद का या उस बाद का जिसमें ऐसा विवाधक बाद में उठाया गया है, विचारण करने के लिये सक्षम नहीं था।

12. इस न्यायालय की राय के अनुसार और सी.पी.सी. की धारा 11 के तहत निहित सैद्धांन्तिक प्रावधानों के कारण, आधारभूत परिमाप, जो न्याय के सिद्धांतों को लागू करने के लिए नियंत्रित करता है, को निम्नलिखित तरीके से अंकित जा सकता है: –

(1) मामला सीधे और काफी हद तक विवाद में है, शब्दों के संदर्भ में, "मामला" और "विवाद", का अर्थ वाद की कार्यवाही का मुख्य विषय होगा यानी विवाद की प्रकृति एक संपत्ति और मुद्दा होगा । मामला यानी मुकदमे की विषय वस्तु को एक ही विषय वस्तु के संबंध में शामिल मुद्दे से अलग करके स्वतंत्र रूप से नहीं पढ़ा जा सकता है। उस घटना में, यदि संपत्ति एक दूसरे से अलग है और अनुतोश भी अलग–अलग है, तो रेस जुडिकाटा का सिद्धांत लागू नहीं होगा, क्योंकि यह संतुष्ट होने की एक पूर्व शर्त होगी।

(2) दूसरा पैरामीटर, जो आवश्यक रूप से आवश्यक है, पूर्व मुकदमे का तथ्य है, समान पक्षकारों के बीच एक वाद होना चाहिए, लेकिन यह स्थिति पक्षकारों के एक ही समूह के बीच वाद होने का अर्थ यह नहीं है कि भले ही पक्षकारों के दो समान समूह किसी भिन्न मुद्दे या किसी विषय वस्तु के संबंध में किसी अन्य वाद में मुकदमेबाजी कर रहे हों, फिर भी न्याय के सिद्धांत लागू नहीं होंगे। रेस जुडिकेटा का सिद्धांत केवल उन परिस्थितियों में लागू होगा, जहां पार्टियों का एक ही सेट, अगर वे बाद के मुकदमे में मुकदमेबाजी कर रहे हैं, तो यह उसी विषय वस्तु से संबंधित है, यानी विवाद में संपत्ति या समान पक्षों के बीच उसमें शामिल मुद्दा . यदि विषय वस्तु या मुद्दे में कोई भिन्नता है, हो सकता है कि बाद का मुकदमा पार्टियों के एक ही समूह के बीच हो, धारा 11 लागू नहीं होगी, यदि विषय वस्तु और मुद्दा एक दूसरे से अलग हैं।

(3) तीसरा पैरामीटर, जिसे सी.पी.सी. की धारा 11 को आकर्षित करने के प्रयोजनों के लिए संतुष्ट होना आवश्यक है। यह होगा कि पार्टियां एक ही शीर्षक के तहत मुकदमेबाजी कर रही हैं, क्योंकि यह पहले के मुकदमे में विचार कर रही थी, जो कि मौजूदा मामले में लागू होने वाला सिद्धांत नहीं हो सकता है, क्योंकि मौजूदा मामले में पक्षकार, जो मुकदमेबाजी कर रहे हैं, हालांकि के तहत एक ही शीर्षक, लेकिन एक अलग संपत्ति के संबंध में, यानी विषय वस्तु, उस घटना में, भले ही पार्टियां अलग संपत्ति के संबंध में और एक अलग अनुतोश के लिए पूर्व वाद में एक ही शीर्षक के तहत मुकदमेबाजी कर रही हों, यह एक अलग मामला होगा और पूरी तरह से अलग मुद्दा होगा जो सीपीसी की धारा 11 को आकर्षित नहीं करेगा।

(4) अन्य आधारभूत पैरामीटर, हालांकि यह विचार नहीं कर सकता है, जहां तक वर्तमान विवादों का संबंध है कि समान मामलों के संबंध में पूर्व वादे या मुद्दे को योग्यता के आधार पर सक्षम न्यायालय द्वारा तय किया जाना चाहिए। चूँकि, यहाँ यह मुद्दा शामिल नहीं है, इस पर विस्तृत विवरण की आवश्यकता नहीं है।

13. माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा जैसा कि श्योदान सिंह बनाम दरयाओ कुंवर AIR 1966 SC 1332 में रिपोर्ट किया गया था, ने इस अवसर पर विचारण न्यायालय की क्षमता के संदर्भ में धारा 11 के निहितार्थ से निपटने के लिए किया था। आधारभूत अंतर , जो न्याय के सिद्धांतों को आकर्षित करने के लिए तैयार किया गया है, को उक्त निर्णय के पैरा–20 में शामिल किया गया है, जिसे यहां निकाला गया है:

> "पैरा 20- अपीलकर्ता की ओर से उद्धृत मामलों पर विचार करने से पता चलता है कि उनमें से ज्यादातर मामले जहां तक वर्तमान मामले के तथ्यों का संबंध है. में सटीक नहीं है। वर्तमान अपील में उठाए गए रेस जुडिकेटा के फैसले के सवाल पर हमारा निष्कर्ष यह है। जहां ट्रायल कोर्ट ने गुणा गुण पर समान मुद्दों वाले दो वादों का फैसला किया है और वहां से दो अपीलें हैं और उनमें से एक को कुछ प्रारंभिक आधार पर खारिज कर दिया गया है, जैसे कि परिसीमा या छपाई में चूक, जिसके परिणामस्वरूप ट्रायल कोर्ट का निर्णय की पुष्टि की जाती है, अपील अदालत का निर्णय रेस जुडिकाटा होगा और अपील अदालत को सुना जाना चाहिए और अंत में मामले का फैसला किया जाना

चाहिए। ऐसे मामले में अपील अदालत के फैसले का परिणाम विचारण न्यायालय के गुण–दोष के आधार पर दिये गये निर्णय की पुष्टि करना है, और यदि ऐसा है, तो अपील न्यायालय का निर्णय पूर्व न्याय होगा, बर्खास्तगी का कारण जो भी हो सकता है। यह एक अलग मामला होगा, हालांकि, जहां अपील अदालत के निर्णय का परिणाम गुण–दोष के आधार पर दिए गए ट्रायल कोर्ट के फैसले की पुष्टि में नहीं होता है, उदाहरण के लिए, जहां अपील कोर्ट का मानना है कि ट्रायल कोर्ट के पास कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था और अपील को खारिज कर देता है, भले ही ट्रायल कोर्ट ने गुण–दोष के आधार पर मुकदमा खारिज कर दिया हो। मामले के इस दृष्टिकोण में, अपीलों को विफल होना चाहिए, क्योंकि ट्रायल कोर्ट ने वर्तमान मामले में गुण के आधार पर सभी चार मुकदमों का फैसला किया था, जिसमें शीर्षक के रूप में समान मुद्दों पर निर्णय भी शामिल था। वाद संख्या 77 और 91 से उत्पन्न दो अपीलों के प्रारंभिक आधार पर खारिज होने का परिणाम यह था कि उच्च न्यायालय द्वारा शीर्षक के रूप में समान मुद्दों के संबंध में विचारण न्यायालय के निर्णय की पुष्टि की गई थी। परिणामस्वरूप उन मुद्दों पर निर्णय, जहां तक अपील संख्या 365 और 366 का संबंध है और सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 उन समान मुद्दों की सुनवाई पर फिर से रोक लगाएगा। यह विवाद में नहीं है कि यदि वाद संख्या 77 और 91 में समान मुद्दों पर निर्णय न्यायपालिका बन जाता है, तो अपील संख्या 365 और 366 विफल होनी चाहिए।

**14. मूल रूप से, यह निर्धारित किया गया है कि जहां ट्रायल कोर्ट ने गुणागुण के आधार पर समान विवाधक वाले दो वादों का फैसला किया है और वहां से दो अपीलें हैं और उनमें से एक को कुछ प्रारंभिक आधारों पर खारिज कर दिया गया है। न्यायालय के फैसले रेस जुडिकेटा के सिद्धांतों को आकर्षित करेंगे, जब किसी भी पश्चातवर्ती निर्णय में, जो विषय वस्तु के संबंध में प्रदान किया गया है, निर्णय की पुष्टि करता है या पहले से तय किए गए मुकदमे में निर्णय को अंतिम रूप देता है, पैरा –8 और 9 का संदर्भ भी आवश्यक हो जाता है, जो यहाँ निकाला जाता है:**

"पैरा 8. हम शुरू में सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 के प्रासंगिक प्रावधानों का उल्लेख कर सकते हैं जहां तक कि वे वर्तमान उद्देश्यों के लिए महत्वपूर्ण हैं। वे इस प्रकार हैं:
"कोई न्यायालय किसी ऐसे वाद अथवा वाद.बिन्दु का विचारण नहीं करेगा जिसके वाद.पद में वह विषय उन्हीं पक्षकारों के मध्य अथवा उन पक्षकारों के मध्य जिनके अधीन वे अथवा उनमें से कोई उसी हक के अन्तर्गत मुकदमेबाजी करने का दावा करता है, एक ऐसे न्यायालय में जो कि ऐसे परवर्ती वाद अथवा ऐसे वाद जिसमें ऐसा वाद.बिन्दु बाद में उठाया गया है, के विचारण में सक्षम है, किसी पूर्ववर्ती वाद में प्रत्यक्ष एवं सारवान् रूप से रहा हो और सुना जा चुका है तथा अन्तिम रूप से ऐसे न्यायालय द्वारा निर्णीत हो चुका है।"
स्पष्टीकरण 1-" पूर्ववर्ती वाद" पद ऐसे वाद का द्योतक है जो प्रश्नगत वाद के पूर्व ही विनिश्चित किया जा चुका है चाहे वह उससे वाद संस्थित किया गया हो या नहीं।

अन्य स्पष्टीकरणों का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है।

9. धारा 11 कि सामान्य अवलोकन से पता चलता है कि रेस जुडिकेटा का गठन करने के लिए, निम्नलिखित शर्तों को पूरा किया जाना चाहिए, अर्थात् – (i) किसी पश्चातवर्ती वाद में कोई विवाधक प्रत्यक्षतः और सारतः वही मामला होना चाहिए जो पूर्ववर्ती वाद में प्रत्यक्षतः और सारतः था। (ii) पहला वाद उन्हीं पक्षों के बीच या उन पक्षों के बीच का वाद होना चाहिए जिनके अधीन वे या उनमें से कोई दावा करता होय (iii) पूर्ववर्ती वाद में पक्षकारों ने एक ही शीर्षक के तहत मुकदमेबाजी की होगी;
(IV) जिस अदालत ने पूर्ववर्ती वाद का फैसला किया है वह एक अदालत पश्चातवर्ती वाद विचारण करने के लिए सक्षम होना चाहिए जिसमें इस तरह के मुद्दे को बाद में उठाया गया है, और
(v) पश्चातवर्ती वाद में प्रत्यक्षतः और सारतः विवाधक बिशय को सुना जाना चाहिए और पूर्ववर्ती वाद में न्यायालय द्वारा अंतिम रूप से फैसला किया जाना चाहिए। स्पष्टीकरण I से पता चलता है कि यह वह तारीख नहीं है जिस पर मुकदमा दायर किया गया है, बल्कि वह तारीख है जिस पर मुकदमा तय किया गया है, ताकि अगर कोई मुकदमा बाद में दायर किया गया हो, तो यह एक पूर्ववर्ती वाद होगा अगर यह पहले तय किया गया हो . इस क्रम में कि पूर्व की दो अपीलों में निर्णय उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया है, रेस जुडिकेटा के रूप में कार्य करता है, यह देखना होगा कि ऊपर वर्णित सभी पांच शर्तों को पूरा किया गया है या नहीं।"

15. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पूर्ववर्ती वाद की धारा 11 के तहत प्रयुक्त अभिव्यक्ति पर कार्रवाई करते हुए यह निर्धारित किया था कि यह हमेशा वाद को निरूपित करेगा, जो कि पहले तय किया जा चुका है चाहे वह पहले स्थापित किया गया था या नहीं, लेकिन यह मुकदमेबाजी के एक ही दावे के तहत, या एक ही संपत्ति के संबंध में और एक ही वाद कारण के लिए होना चाहिए। धारा 11 को आकर्षित करने के लिए उपरोक्त पैरामीटर आवश्यक हैं जो वर्तमान मामले की परिस्थितियों में उपलब्ध नहीं हैं। ऐसी स्थिति में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिया गया तर्क स्वीकार्य नहीं है। श्योदान सिंह (सुप्रा) की संविधान पीठ में कोर्ट ने फैसले के पैरा–13 में धारा 11 के अनुपात पर विचार किया है, जिसमें उसने पहले से ही ऊपर देखे गए बुनियादी मापदंडों को निर्धारित किया है, जिनमें धारा 11 के द्वारा पश्चातवर्ती वाद की कार्यवाही को रोका जाना संतुश्टिकारक है। पैरा –13 का प्रासंगिक भाग यहां निकाला गया है:–

> "इस संबंध में भरोसा सुस्थापित सिद्धांत पर रखा गया है कि यह कहा जा सकता है कि किसी मामले को सुना जा चुका है और अंतिम रूप से निर्णय लिया गया है, पूर्ववर्ती वाद में निर्णय गुणागुण के आधार पर होना चाहिए। जहां, उदाहरण के लिए, पूर्ववर्ती वाद में विचारण न्यायालय द्वारा क्षेत्राधिकार के अभाव में, या वादी की उपस्थिति में चूक के कारण, या पक्षकारों के असंयोजन या पक्षकारों के गलत संयोजन या बहुविधता के आधार पर, या इस आधार पर कि वाद उचित प्रकार से ड्राफ्ट नहीं किया गया था, या एक तकनीकी गलती के आधार पर, या वादी की ओर से प्रोबेट या प्रशासन पत्र या उत्तराधिकार प्रमाण पत्र प्रस्तुत करने में विफलता के लिए, जब वादी को डिक्री का हकदार बनाने के लिए कानून द्वारा आवश्यक हो, या लागतों के लिए सुरक्षा प्रदान करने में विफलता के लिए, या अनुचित मूल्यांकन के आधार पर या एक वाद पर अतिरिक्त न्यायालय शुल्क का भुगतान करने में विफलता के लिए जो कम मूल्य का था या कार्रवाई के कारण के अभाव में या इस आधार पर कि यह समय से पहले है और बर्खास्तगी की अपील में पुष्टि की गई है (यदि कोई हो) वाद को खारिज कर दिया गया हो , निर्णय गुणागुण के आधार पर नहीं माना जायेगा ना ही पश्चातवर्ती वाद में रेस जुडिकेटा होगा।"

16. हाल ही में, आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने पडाला लीलावती बनाम पी मंगयम्मा एआईआर ऑनलाइन 2021 एपी 1028 में अवधारित किया है कि विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए मुकदमे की कार्यवाही के संदर्भ में धारा 11 के प्रभाव से निपटने के दौरान धारा 11 के निहितार्थों पर विचार किया है, जिसे उसमें आदेश 7 नियम 11 के तहत निहित प्रावधानों के अनुरूप पढ़ा गया था। एक मुकदमे में, जिसमें पक्षकारों के बीच स्वत्वाधिकार की घोषणा और स्थायी निषेधाज्ञा का मुद्दा शामिल था, जो "समान वाद संपत्ति" के संबंध में वाद में पहले मुकदमेबाजी कर रहे थे। हालाँकि, मामला बाद के मुकदमे में तय किए जाने वाले मुद्दे में केवल संपार्श्विक या आकस्मिक हो सकता है, अगर यह एक ऐसा विषय है जो आकस्मिक विचार है, तो मुकदमे को रेस जुडिकाटा के सिद्धांतों द्वारा प्रतिबंधित नहीं किया जाएगा, और विशेष रूप से, तत्काल में मामला जहां, यह पहले से ही ऊपर देखा गया है यानी संपत्ति के एक अलग सेट के संबंध में। उक्त निर्णय के पैरा 33 से 36 नीचे दिए गए है:–

> "जाहिरा तौर पर, अपीलीय न्यायाधीश ने इस तथ्य पर ध्यान नहीं दिया था कि इस तरह की याचिका मृतक प्रतिवादी द्वारा लिखित बयान में स्थापित की गई थी। विद्वान परीक्षण न्यायाधीश द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष इस प्रकार प्रतिवादी के खिलाफ हैं। उसने पहली अपील में कोई प्रति आपत्तियां दायर नहीं की । अपीलीय अदालत के फैसले ने यह नहीं दर्शाया कि मृतक प्रतिवादी ने सीपीसी के आदेश 41, नियम 22 के संदर्भ में उस अपील में प्रचार करना चुना था, जबकि ऐसे निष्कर्षों पर सवाल उठाने वाले डिक्री का समर्थन किया था, जो उसके खिलाफ खड़े थे। उस चरण में मृत प्रतिवादी द्वारा इस तरह के प्रयास के अभाव में, यह वास्तव में अपीलीय न्यायाधीश के लिए इस तरह के प्रश्न पर विचार करने और उस पर एक निष्कर्ष रिकॉर्ड करने के लिए खुला नहीं था। यह विद्वान अपीलीय न्यायाधीश द्वारा एक अनुचित दृष्टिकोण है। इसलिए, विद्वान विचारण न्यायाधीश का रेज जूडिकाटा या इसके सिद्धांतों के आवेदन से संबंधित किसी भी निष्कर्ष को रिकॉर्ड करने का कोई असर नहीं हो सकता है ।
>
> 34. श्री एम.राधाकृष्ण, अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता, द्वारा ग्राम पंचायत नौलखा बनाम उजागर सिंह और अन्य एआईआर 2000 एससी 3272 के आधार पर रेस जुडिकाटा के सिद्धांतों का जिक्र करते हुए आवेदन प्रस्तुत किया , इस फैसले के पैरा 10 में, सज्जादनाशी सैयद बनाम मूसा दादाभाई उम्मेर (2000)3 एससीसी 350: (एआईआर 2000 एससी 1238) एक साधारण प्रकृति के निषेधाज्ञा के दावे और ना कि स्वत्व पर ,के जिक्र पर आधारित है ।
>
> "10. हम एक अन्य महत्वपूर्ण कारण भी जोड़ सकते हैं जो अक्सर धारा 11, सीपीसी के तहत उत्पन्न होता है। पंचायत के खिलाफ प्रतिवादी द्वारा पहले का मुकदमा केवल व्यादेश के लिए एक

मुकदमा था और स्वत्व का कोई नहीं था। स्वत्व के सवाल पर कोई फैसला नहीं किया गया था । उक्त निर्णय, इसलिए, स्वत्व के प्रश्न पर बाध्यकारी नहीं हो सकता। इस संबंध में देखें सज्जादनाशिन सैयद बनाम मूसा दादाभाई उम्मेर [(2000) 3 एससीसी 350: (एआईआर 2000 एससी 1238), जहां यह न्यायालय, भारत और अन्य जगहों पर कानून के विस्तृत विचार पर, कि भले ही निषेधाज्ञा के लिए पहले के एक मुकदमे में, एक आकस्मिक निष्कर्ष है स्वत्व , वही बाद के मुकदमे या कार्यवाही में बाध्यकारी नहीं होगा जहां स्वत्व सीधे प्रश्न में है, जब तक कि यह स्थापित नहीं हो जाता है कि व्यादेश में देने या इनकार करने के लिए स्वत्व के प्रश्न को तय करने के लिए पहले के मुकदमे में "आवश्यक" था और यह कि निषेधाज्ञा के लिए अनुतोश की स्थापना या स्वत्व पर खोज के आधार पर की गई थी। यहां तक कि स्वत्व पर किसी मुद्दे को तैयार करना भी पर्याप्त नहीं हो सकता है जैसा कि उस मामले में बताया गया है।"

35. ऊपर संदर्भित सज्जादनाशीन सैयद में, धारा 11.सीपीसी की प्रयोज्यता निर्धारित करने के लिए परीक्षण और एक मामले के संदर्भ में रेस जुडिकाटा के सिद्धांत प्रत्यक्षत: और सारत: रूप से पैरा 12 में निम्नानुसार बताए गए हैं:

"12. यह ध्यान दिया जाएगा कि सीपीसी की धारा 11 में प्रयोग किए गए शब्द " वाद की कार्यवाही में प्रत्यक्षत: और सारत: हैं।"न्यायिक निर्णयों ने हालांकि यह माना है कि यदि कोई मामला केवल "संपार्श्विक रूप से या आकस्मिक रूप से" विवाद में था और पहले की कार्यवाही में निर्णित किया गया था, तो बाद की कार्यवाही में इसका निष्कर्ष सामान्य रूप से न्यायिक नहीं होगा जहां मामला वाद की कार्यवाही में प्रत्यक्षत: और सारत: हैं।"

36. इस मामले के दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों में, रेस जुडिकेटा का यह प्रश्न विचार के लिए शेष नहीं रह गया था।"

17. यह संबंधित है कि एक ही विषय वस्तु के संबंध में संपत्तियों के एक ही समूह के लिए पक्षकारों के एक ही समूह के संबंध में एक पारस्परिक मुकदमा होना चाहिए। चूंकि नियमित वाद में और प्रतिदावें में जो दावा किया गया था यानी सीपीसी की धारा 11 के तहत विचार किये गये सिद्धांत पर विषय वस्तु यानी विवादित संपत्ति पूरी तरह से अलग थी, वर्तमान मामले में केवल इस तथ्य के कारण लागू नहीं होगा कि प्रतिवादी ने प्रतिदावे की अस्वीकृति के बावजूद, एक स्वतंत्र डिक्री दाखिल करके प्रतिदावे की अस्वीकृति को चुनौती नहीं दी है, जितना अधिक से अधिक यह अनुमान लगाया जाएगा कि उसने प्राप्त कर लिया है। अंतिम रूप से संपत्ति के संबंध में प्रतिवादी/प्रत्यर्थी, जो केवल प्रतिदावे का विषय था, क्योंकि डोमिनोज लिटस के सिद्धांत के तहत, यह विशेष रूप से, पार्टी की पसंद है उसके खिलाफ दी गई डिक्री को चुनौती देने की कार्यवाही जिसके कारण वह प्रभावित हुआ है और इसलिए, वादी/अपीलकर्ता के मुकदमे की डिक्री के हिस्से के रूप में सिविल अपील संख्या 7/2005 को प्राथमिकता दी गई है, जो कि एक स्वतंत्र डिक्री, इसे इस तथ्य के कारण अस्थिर नहीं करेगी कि एक स्वतंत्र अपील दायर करके प्रतिदावे को चुनौती नहीं दी गई है, क्योंकि प्रभाव, जो अपील की गैर वरीयता के परिणाम के रूप में होगा, केवल उन अधिकारों के लिए होगा जो प्रतिवादी द्वारा संपत्ति के एक अलग समूह के संबंध में दावा किया गया था, यानि जो काउंटर क्लेम का विषय था। खसरा नं. 235/1, जिसका उस वाद की डिक्री से कोई संबंध नहीं है, जो प्रतिदावे से भिन्न संपत्ति के अन्य समुच्चय के संबंध में था।

18. अतः इस न्यायालय की समन्वित न्यायपीठ द्वारा तैयार किये गये सारवान प्रश्न विधिक विन्दु सं0 2 के वर्तमान मामले में लागू किए जाने की ओर आकर्षित नहीं होगा, विशेष रूप से तब जब वाद और प्रतिदावे में विवाद में संपत्ति एक दूसरे से पूरी तरह से भिन्न थी। उस स्थिति में, विधिक विन्दु सं. 2 के सारवान प्रश्न पर निष्कर्ष का, एक के रूप में बनाए गए विधि के सारवान प्रश्न पर सीधा प्रभाव होगा, जो इसके आशय में लगभग समान था, कि इसका क्या प्रभाव होगा, यदि प्रतिवादी ने प्रतिदावे को खारिज करने के विरुद्ध कोई अपील नहीं की है, जैसा कि इस न्यायालय ने पहले ही प्रतिदावे का अवलोकन किया है, संपत्ति के एक भिन्न समुच्चय के संबंध में एक स्वतंत्र वाद/दावा था, तो इसका उस अपील पर कोई प्रभाव नहीं होगा जो प्रतिवादियों/प्रत्यर्थियों द्वारा उस संपत्ति के संबंध

में वाद की डिक्री के विरुद्ध की गई थी जो तब थी। वास्तव में विचाराधीन वाद का विषय। इसलिए ये दोनों महत्वपूर्ण प्रश्न ऊपर देखे गए विशिष्ट अंतर के आलोक में विचार के लिए नहीं आते हैं।

19. यह न्यायालय उस निर्णय और डिक्री पर विचार करना भी आवश्यक समझता है जो विचारण न्यायालय द्वारा 30.05.1994 को दिया गया था, जिसे वादी/अपीलार्थी द्वारा यहाँ पढ़ने का अनुरोध किया गया है, मानो यह उसके स्वामित्व और अधिकार की घोषणा की डिक्री हो। वाद में मांगी गई राहत को घोषणा के परिप्रेक्ष्य से इसके विचार में अलग किया जाना है, जहां यह पूरी तरह से एक डी नोवो कार्यवाही है जिसका उपयोग सिविल कोर्ट द्वारा एक व्यक्ति के स्वामित्व और हक को निर्धारित करने के लिए किया जाना है, जो संपत्ति पर घोषणा की डिक्री का दावा करता है और जिसके लिए एक व्यक्ति को स्वामी घोषित करने के लिए विचारण न्यायालय द्वारा अपनाए गए मापदंडों के रूप में विन्दु संख्या 1 का निर्णय लेते समय विचार और निष्कर्ष की भी आवश्यकता होती है, इसमें, एक वादी/अपीलार्थी का अर्थ है कि वह वाद में विवादित संपत्ति में केवल खसरा नं. 235/2 और 235/1, का स्वामी है। और इसके अलावा इसे किसी अन्य संपत्ति के संबंध में नहीं पढ़ा जाएगा, जो वाद की विषयवस्तु के विषय में थी।

20. विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा, विशेष रूप से विन्दु संख्या. 1 का विनिश्चय करते समय की गई टिप्पणियां कि जिसका संदर्भ पहले ही कि वादी संपत्ति के कब्जे व स्वामित्व में है और वह संपत्ति का स्वामी है ऊपर दिया जा चुका है, अभिलिखित निष्कर्ष निकालकर, यदि उस पर विचार किया जाता है, यह अवलोकन करते हुए वास्तव में, इस न्यायालय का विचार है कि स्वामित्व का निर्धारण साक्ष्य के मूल्यांकन के बाद ही किया जा सकता है और स्पष्ट रूप से केवल एक खसरा जो कब्जे का एक राजस्व अभिलेख है, को वादी/अपीलार्थी द्वारा भरोसा किए गए स्वामित्व के अभिलेख के रूप में निर्धारित नहीं किया जा सकता है।

21. अतः, स्वामित्व का निष्कर्ष, इसके विपरीत कोई साक्ष्य होने के अभाव में, वादी/अपीलार्थी मामले के समर्थन में नहीं पढ़ा जा सकता है, संपत्ति पर स्वामित्व की घोषणा की डिक्री के अनुदान के लिए अपने दावे को स्थापित करने के लिए, यह हो सकता है कि भले ही वादी/अपीलार्थी सफल होने में सक्षम हो गया हो, कि वह खसरा के आधार पर मुकदमे में लागू संपत्ति पर कब्जा कर रहा है, जिस पर उसने नीचे दिए गए न्यायालय के समक्ष कार्यवाही में भरोसा किया था।

22. वास्तव में, यदि वादविन्दु संख्या. 1 पर निष्कर्ष को वादी/अपीलार्थी द्वारा घोषणा की डिक्री की मांग के माध्यम से हक स्थापित करने के लिए किए गए प्रयासों के संबंध में पढ़ा जाता है, यदि उस पर विचार किया जाता है, तो कोई ठोस और निष्कर्ष नहीं है खसरा संख्या के संबंध में प्रासंगिक स्वीकार्य साक्ष्य के आधार पर अदालत द्वारा दर्ज तथ्य का निष्कर्ष 235/2 और 235/1, किस तरीके से, प्रश्नगत संपत्ति के संबंध में घोषणा की जा सकती थी और यही कारण है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने सावधानीपूर्वक यह मत व्यक्त किया था कि वादी/अपीलार्थी स्वामी एवं कब्जाधारी है, लेकिन इस अवलोकन को वादविन्दु संख्या 1 का विनिश्चय करते समय इसे पढ़ा और निर्णीत नहीं किया जा सकता है कि यह वास्तविकता में भौतिक साक्ष्य के आधार पर एक घोषणा थी, क्योंकि केवल एक स्वामित्व की रिकॉर्डिंग जो किसी भी साक्ष्य के बिना मूल्यांकन पर आधारित है, वही प्रश्नगत संपत्ति पर अधिकार की घोषणा की डिक्री का निर्णायक रूप नहीं ले सकता है। जिस पर स्वयं वादी/अपीलार्थी द्वारा संदेह किया गया था जब उसने विचाराधीन वाद में राहत को संशोधित किया था।

23. उस स्थिति में, इस न्यायालय का यह मत है कि जिस रेस जुडिकेटा के सिद्धांत को आकर्षित करने की इच्छा की गई है, वे लागू नहीं होंगे, और यदि डिक्री को ही विचार में लिया जाता है, जहां विद्वान विचारण न्यायालय की डिक्री ने कहा है कि वाद डिक्रीत है, तो यहाँ डिक्री का अर्थ घ ोषणा की डिक्री के रूप में नहीं लगाया जाएगा, जब तक कि और जब तक, वादी/अपीलार्थी को अभिलेख पर रखे गए साक्ष्य दस्तावेजों और संबंधित पक्षों को अवसर प्रदान करने के बाद इसके मूल्याकंन के आधार पर संपत्ति का मालिक घोषित करने के न्यायालय द्वारा विश्वसनीय साक्ष्य के आधार पर एक विशिष्ट निर्णायक निष्कर्ष दर्ज नहीं किया जाता है।

24. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय की समन्वित पीठों द्वारा दिए गए निर्णय का संदर्भ दिया था, विशेष रूप से द्वितीय अपील संख्या 77/2013, विक्रम सिंह बनाम ओम सिंह और अन्य में, जिसमें न्यायालय विचार कर रहा था, इसका क्या प्रभाव होगा जिसमें स्थायी निषेधाज्ञा के अनुदान के लिए एक मुकदमा प्रतिवादी द्वारा एक अपंजीकृत बिक्री विलेख के आधार पर उठाया गया एक प्रतिदावा था, जहां उसने डिक्री के माध्यम से मांग की है एक प्रतिदावा जिसे चुनौती नहीं दी गई थी। उक्त मामले में, निर्णय के पैरा– 5 और 6 में देखे गए निर्णय के अनुसार रेस जुडिकाटा के सिद्धांत का पहलू आकर्षित किया गया था, जो प्रीमियर टायर्स लिमिटेड बनाम केरल राज्य सड़क परिवहन निगम 1993 supp (2) सु0को0के0 146, के आधार पर था। जो उक्त निर्णय के पैरा 4 और 6, के संदर्भ में विशेष रूप से बनाया गया है । मैं उक्त अनुपात में मामले की वर्तमान परिस्थितियों में लागू किया जाने से सम्मानपूर्वक असहमत हूं, , क्योंकि यह एक ऐसा मामला था, जिसके संबंध में द्वितीय अपीलीय अदालत द्वारा विचार किया जा रहा था संपत्ति के एक ही समूह या संपत्ति के एक अलग समूह के लिए और विशेष रूप से, जब वाद में मांग की गई डिक्री की प्रकृति और प्रतिदावा केवल एक स्थायी निषेधाज्ञा के डिक्री के अनुदान का था।

25. इसलिए, चूंकि यह निर्णय पूरी तरह से अलग–अलग परिस्थितियों पर आधारित है, इसलिए तत्काल मामले में लागू नहीं होगा, क्योंकि वाद और प्रतिदावे में विचार के लिए विषय वस्तु सामान्य थी और यहां तक कि डिक्री की प्रकृति भी वादी और प्रतिवादी द्वारा संबंधित वाद और प्रतिवाद में मांगी गई थी।

26. एक अन्य निर्णय, जिस पर, अपीलकर्ता के विद्वान वकील द्वारा निर्भरता रखी गई है, जैसा कि दीदार सिंह और अन्य बनाम मलकीत सिंह, 2020 की द्वितीय अपील संख्या 16 में दिया गया है। यदि उक्त मामले के तथ्यात्मक मैट्रिक्स पर विचार किया जाता है, जिस पर उसमें विचार किया गया था, तो पैरा–2 में की गई टिप्पणियों के अनुसार, जहां तथ्यों पर विचार किया जा रहा था, उसमें अपीलार्थीध्प्रतिवादी, स्थायी निषेधात्मक निषेधाज्ञा की डिक्री के अनुदान के खिलाफ व्यथित थे।

27. इस न्यायालय का विचार है कि यदि वह मामला जिसके लिए स्थायी निषेधात्मक निषेधाज्ञा के अनुदान के लिए विचार करने की आवश्यकता है, तो उन कार्यवाहियों में,स्वत्व या स्वामित्व का प्रश्न केवल आनुषंगिक प्रकृति का होता है। यह एक निर्णायक निष्कर्ष नहीं होगा, और विशेष रूप से, यह तत्काल मामले में लागू किया जाने वाला एक निर्णायक निष्कर्ष नहीं होगा, जब उक्त दूसरी अपील में, संपत्ति पर अपने स्वामित्व की घोषणा के लिए वादी द्वारा उठाए गए दावे से संबंधित विचार का एक भी तत्व नहीं था, इसलिए उक्त निर्णय के पैरा–5 में देखे गए रेस जुडिकाटा के सिद्धांतों को आकर्षित करके काउंटर क्लेम को खारिज करने के लिए गैर–चुनौती का असर, फिर से, प्रीमियर टायर्स लिमिटेड के सिद्धांतों के आधार पर तत्काल दूसरी अपील में लागू होने के लिए आकर्षित नहीं किया जाएगा, और पुनरावृत्ति के माध्यम से, यह लागू नहीं होगा क्योंकि अब तक

वर्तमान दूसरी अपील का संबंध है, अगर इसे प्रतिदावे के संबंध में पढ़ा जाता है विभिन्न विषय वस्तु के संदर्भ में बताती है, इस कारण यह लागू नहीं है ।

28. अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने एक अन्य निर्णय का संदर्भ दिया है, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रजनी रानी और अन्य बनाम खराती लाल और अन्य 2015 (2) SCC 682, में रिपोर्ट किया गया है, जिसमें न्यायालय आदेश VIII नियम 6क के तहत प्रतिदावे के निहितार्थों पर विचार करते हुए और पक्षों के बीच अधिकारों के निर्णायक निर्धारण से संबंधित सी.पी.सी. के आदेश 2 नियम 2 के प्रतिबंध को आकर्षित करने के लिए न्यायालय द्वारा किए गए अधिनिर्णय के परिणामस्वरूप था। जिसे उक्त निर्णय के पैरा 15, 16 और 17 में की गई टिप्पणियों के आलोक में ध्यान में रखा गया था, जिसे यहां नीचे उद्धृत किया गया है:–

"15. विधि के पूर्वोक्त निरूपण से यह प्रकट होता है कि जब अधिनिर्णय पर पक्षकारों के अधिकारों का निर्णायक निर्धारण होता है, तो कुछ परिस्थितियों में उक्त निर्णय को डिक्री की स्थिति प्राप्त हो सकती है। मौजूदा मामले में, जैसा कि पहले बताया गया है, प्रतिदावे का फैसला किया गया है और गुण–दोष के आधार पर फैसला किया गया है कि यह सी.पी.सी. के आदेश 2, नियम 2 के सिद्धांत द्वारा वर्जित है। प्रतिवादियों के दावे को नकारा गया है। जग मोहन चावला और अन्य बनाम डेरा राधा स्वामी सत्संग और अन्य, में प्रति–दावा की अवधारणा से निपटने के मामले में, न्यायालय ने इस प्रकार राय दी है: –

" कि यह एक क्रॉस–सूट के रूप में माना जाता है, जिसमें अभिवचनों के सभी संकेतकों को एक वाद के रूप में माना जाता है, जिसमें उसकी कार्रवाई के कारण को पूरा करने का कर्तव्य और उस पर अपेक्षित न्यायालय शुल्क का भुगतान भी शामिल है। प्रतिवादी को एक स्वतंत्र मुकदमे में वापस लाने के बजाय, बहुलता को टालने के लिए कार्यवाही और अनावश्यक सुरक्षा (एसआईसी प्रोट्रैक्शन), विधायिका का आशय वाद और प्रतिदावे के रूप में वाद और प्रतिदावे दोनों की कोशिश करना है और उन्हें एक ही परीक्षण में निपटाना है। दूसरे शब्दों में, किसी भी कार्रवाई के कारण के संबंध में प्रति–दावे के माध्यम से किसी भी अधिकार का दावा एक प्रतिवादी कर सकता है , भले ही यह वादी द्वारा दावा किए गए कार्रवाई के कारण से स्वतंत्र हो और प्रतिवादी एक अलग वाद फाइल करने के लिए आरोपित किए बिना कार्रवाई का एक ही कारण हो "

16. प्रतिदावे को दिए गए वैचारिक अर्थ और उसे निर्दिष्ट निश्चित चरित्र को ध्यान में रखते हुए, इसमें संदेह की कोई छाया नहीं हो सकती है कि जब प्रतिवादी द्वारा दायर किए गए प्रतिदावे को अधिनिर्णित और खारिज कर दिया जाता है, तो अन्तिमता इसके साथ जुड़ी होती है। जहां तक प्रतिवादियों द्वारा किए गए दावे के संबंध में विवाद का संबंध है। जहां तक उक्त प्रतिवादियों का संबंध है, उस संबंध में कुछ भी नहीं बचा है। यदि एक डिक्री की परिभाषा को उचित रूप से समझा जाता है, तो यह बताता है कि जहां तक उस न्यायालय का संबंध है, एक न्यायनिर्णय की औपचारिक अभिव्यक्ति होनी चाहिए। दृढ़ संकल्प को निर्णायक रूप से उस क्षेत्र में पक्षकारों के अधिकारों को आराम देना चाहिए। जब एक राय यह मानते हुए व्यक्त की जाती है कि प्रति–दावा आदेश 2, नियम 2 सी0पी0सी0 के सिद्धांतों द्वारा वर्जित है, तो यह निश्चित रूप से प्रतिवादियों के मूल अधिकार के संबंध में विवाद का निर्णय करता है जिन्होंने प्रति–दावा दर्ज किया था। इसे मुकदमे में दर्ज सहायक या आनुषंगिक कानूनी निष्कर्ष के रूप में नहीं माना जा सकता है। इस संदर्भ में, हम तीन–न्यायाधीशों की खंडपीठ के फैसले मैसर्स राम चंद एसपीजी एंड डब्ल्यूवीजी मिल्स बनाम मैसर्स बिजली कॉटन मिल्स (प्रा.) लिमिटेड, हाथरस और अन्य (4), जिसमें उनके आधिपत्य एक डिक्री होने के लिए एक अंतिम आदेश का गठन कर रहे थे। उसमें विवाद का जोर यह था कि निष्पादन अदालत द्वारा एक नीलामी बिक्री को अशक्तता के रूप में अलग करने के लिए पारित आदेश एक अपीलीय आदेश है या नहीं। न्यायालय ने जेठानंद एंड संस बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (5), और अब्दुल रहमान बनाम डी.के. कासिम एंड संस (6), और इस प्रकार बताने के लिए अग्रसारित हुए :

"इस प्रश्न का निर्णय करने में कि क्या आदेश पक्षकारों के अधिकारों का निर्धारण करने वाला अंतिम आदेश है और इसलिए, धारा 2(2) में एक डिक्री की परिभाषा के अंतर्गत आने पर, इसे दोनों के दृष्टिकोण से देखना अक्सर आवश्यक हो जाता कि वर्तमान मामले में पक्षकार निर्णित–ऋणी और नीलामी–क्रेता हैं। जहां तक निर्णित–ऋणी का संबंध है, आदेश स्पष्ट रूप से उसके अधिकारों को अंतिम रूप से तय नहीं करता है क्योंकि एक नई बिक्री का आदेश दिया गया है। हालांकि, नीलामी–क्रेता की स्थिति अलग है। जब एक नीलामी केता को सबसे अधिक बोली लगाने वाला घोषित किया जाता है और नीलामी के समाप्त होने की घोषणा की जाती है, तो उसके लिए कुछ अधिकार अर्जित होते हैं और वह शेष राशि का भुगतान करने पर न्यायालय के माध्यम से संपत्ति के हस्तांतरण का हकदार हो जाता है, जब तक कि बिकी की पुष्टि नहीं हो जाती । जहां नीलामी बिक्री को अमान्यता के रूप में अलग करने के लिए एक आवेदन किया जाता है, अगर न्यायालय इसे या तो इस तरह के आवेदन पर एक आदेश द्वारा या स्वप्रेरणा से अलग करती है , तो उसके और निर्णीत–ऋणी के बीच ऐसे मामले में उत्पन्न होने वाला एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या आदेश 21 नियम

> 84 या अन्य समान अनिवार्य प्रावधानों के किसी भी उल्लघन के कारण नीलामी अमान्य थी । यदि न्यायालय नीलामी बिक्री को रद्द कर देती है तो मामला समाप्त हो जाता है और जहॉ तक उसके और निर्णीत ऋणी का सम्बन्ध है, कोई और प्रश्न शेष नहीं रह जाता है। भले ही ऐसे मामले में पुर्नविक्रय का आदेश दिया गया हो, ऐसे आदेश को अन्तरवर्ती आदेश नहीं कहा जा सकता क्योकि पूरे मामले का अन्तिम रूप से निस्तारण किया जाता है। इस प्रकार यह प्रकट होता है कि नीलामी विक्री राशि को अलग करने का आदेश उस विशेष सिविल कार्यवाही में, विवाद में पक्षकारो के अधिकारो से सम्बन्धित अन्तिम निर्णय के समान है, ऐसी कार्यवाही जिसमें नीलामी विक्री से उत्पन्न होने वाले पक्षकारो के अधिकार और देनदारियॉ विवादित है और जहॉ वह अन्त में न्यायालय द्वारा आदेश पारित करके निर्धारित किए जाते है। ऐसे मामले में पक्ष केवल निर्णीत ऋणी और नीलामी केता है, उनके बीच एकमात्र मुद्दा यह निर्धारित करना है कि क्या नीलामी विक्री को अलग रखा जा सकता है। उस मामले का अन्त तब होता है जब न्यायालय आदेश पारित करती है और वह आदेश अन्तिम होता है क्योकि यह अन्ततः पक्षकारो के अधिकारो एवं देनदारियो को निर्धारित करता है अर्थात उस विक्री के सम्बन्ध में निर्णीत ऋणी और नीलामी केता जैसे कि इस आदेश के बाद उनके बीच कुछ भी तय होना बाकी नहीं रह गया है।
>
> ऐसा कहने के बाद, न्यायालय ने फेसला सुनाया कि विवादित आदेश पक्षकारो के अधिकारो का निर्धारण करने वाला एक अन्तिम आदेश था और इसलिए डिक्री की परिभाषा *धारा 2 उपधारा 2* सपठित धारा 47 के अन्तर्गत आता है और एक अपीलीय आदेश था।
>
> 17. हमने उपरोक्त निर्णयों का उल्लेख इस बात पर प्रकाश डालने के लिए किया है कि ऐसी परिस्थितियाँ हो सकती हैं जहाँ किसी आदेश को डिक्री का दर्जा मिल सकता है। एक न्यायालय एक औपचारिक डिक्री तैयार कर सकता है या नहीं भी कर सकता है, लेकिन यदि न्यायालय के आदेश के आधार पर, अधिकारों पर अंततः निर्णय लिया गया है, तो निर्विवाद रूप से यह एक डिक्री का दर्जा ग्रहण करेगा। जैसा कि स्पष्ट है , वर्तमान मामले में, प्रतिदावा, जो एक क्रॉस–सूट की प्रकृति में है, खारिज कर दिया गया है। प्रतिदावा दायर करने वाले प्रतिवादियों के लिए और कुछ नहीं बचा है। इसलिए, हमें यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि विद्वान विचारण न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को एक डिक्री का दर्जा प्राप्त है और इसे उपयुक्त मंच के समक्ष चुनौती दी जानी चाहिए जहां अपेक्षित शुल्क का भुगतान करके अपील की जा सकती है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय द्वारा इसे अस्थिर नहीं किया जा सकता था। अतः उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश बचाव योग्य नहीं है।

29. इस न्यायालय का विचार है, कि पुनरावृत्ति के जोखिम पर भी आदेश 2 नियम 2 के सिद्धांत, जो पैरा 15,16 और 17 में निर्दिष्ट अनुपात में है, इसमें लागू नहीं होगा, क्योंकि लगभग उन्ही सिद्धांतों के आधार पर है जिसकी पहले ही चर्चा की जा चुकी है, जब वाद में या आदेश VIII नियम 6क के तहत डिक्री की प्रकृति पूरी तरह से अलग थी। एआईआर 1993 (एससी) 1202, प्रीमियर टायर्स लिमिटेड बनाम केरल राज्य सड़क परिवहन निगम में दिए गए निर्णय की नियति भी ऐसी ही होगी, क्योंकि मैंने पहले ही उक्त निर्णय के प्रभाव पर चर्चा की है,जिसे इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने विक्रम सिंह और दलबीर सिंह (सुप्रा) की दो दूसरी अपीलों में निर्दिष्ट किया था। रेस जुडिकेटा के सिद्धांत व तत्व के लागू करने के सिद्धांत के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय के पैरा 3 में वर्णित किया गया है, तर्क व समानता में आकर्षित नहीं करते हैं, जिसे यह न्यायालय पूर्व में ही उपर पैराग्राफ में विवरणित कर चुका है ।

30. उस घटना में, अपीलीय न्यायालय द्वारा किए गए कारणों और टिप्पणियों को देखते हुए, सिविल अपील संख्या 7/2005 में अपीलीय न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को पलटते हुए वादी/अपीलकर्ता के मुकदमे की डिक्री किसी भी स्पष्ट कानूनी दोषों से ग्रस्त नहीं है और विशेष रूप से, विधि के सारवान प्रश्न के आलोक में, जो न्याय के सिद्धांत को लागू करने के लिए सीमित था और विशेष रूप से जो सिद्धांत को लागू करने तक सीमित था, क्या होगा आदेश VIII नियम 6क के तहत प्रतिदावे की अस्वीकृति के रूप में दी गई डिक्री को चुनौती न देने का प्रभाव क्या होगा, जिसका उत्तर इस न्यायालय द्वारा इस निर्णय के पूर्व भाग में पहले ही दिया जा चुका है।

31. कार्यवाही के किसी भी स्तर पर, यह कभी भी वादी/अपीलार्थी का मामला नहीं था, कि विषय वस्तु यानी वाद में या प्रतिदावे में विवादित संपत्ति एक ही संपत्ति थी, जो विवाद का विषय है।

**32.** इसलिए, इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा तैयार किए गए कानून के सारवान प्रश्न इस वर्तमान दूसरी अपील में विचार के लिए शामिल नहीं है, और इसलिए, उनका उत्तर वादी/अपीलार्थी के विरुद्ध दिया जाता है।

**33.** तदनुसार, द्वितीय अपील में योग्यता का अभाव है और तदनुसार उसे खारिज किया जाता है।

[शरद कुमार शर्मा,जे,]
11-07-2022

नाहिद

(Translation has been done through AI Tool : Google Lens
द्वारा– शैलेन्द्र कुमार यादव
सिविल जज, कीर्ति नगर
टिहरी गढवाल